तंत्र दीपीका - श्री राघवेंद्र तीर्थ

श्री शेषगिरि आचार्य श्री राघवेंद्र स्वामि मठ के शिष्य है। वे श्री पूर्णप्रज्ञ विध्यापीठ के अग्र श्रेणि के विध्वांसों मे गिने जाते हैं। चतः शास्त्रों मे परिणिति, सुधादि ग्रंथों का पाठ—प्रवचन, अनेक ग्रंथों का संपादन् एवं अनुवादन का श्रेय श्री शेषगिरि आचार्य का है। सन **2002** मे, इन्को मंत्रालय श्री राघवेंद्र स्वामि मठ का "श्री राघवेंद्रानुग्रह प्रशस्ति" से सम्मनित किया गया था।

==========

श्री राघवेंद्र स्वामि द्वारा लिखित तंत्र दीपीका , भ्रह्म सूत्रों का अर्थ विवरण करता है। श्री राघवेंद्र स्वामिजी के व्याख्यान अनेक तरह के है। परिमळ एवं भावदीप टकिाचार्य जी के न्याय सुधा एवं तत्व प्रकाशिका कृतियों का व्याख्यान है। तत्व मंजरि आचार्य जी के अनुभाष्य का सीधा (तत्स्वरूप) व्याख्यान है। श्री राघवेंद्र स्वामिजी का चंद्रिका प्रकाश श्री व्यासराज् के तात्पर्य चंद्रिका ग्रंथ का व्याख्यान है।

अथार्थ सूत्रों का व्याख्यान भाष्य। भाष्य का व्याख्यान तत्व प्रकाशिका। तत्व प्रकाशिका का व्याख्यान तात्पर्य चंद्रिका। तात्पर्य चंद्रिका का व्याख्यान चंद्रिका प्रकाश है। भ्रह्म सूत्र व्याख्यानों कि सरणि मे इतने व्यवह्ति रूप से भी व्याख्यान करने वाले स्वामी जी ने सूत्रों का सीधा (तत्स्वरूप) व्याख्यान अगर किया है तो वह ऐक विशिष्ट ग्रंथ ही होगा। और , हैं भी।

श्री स्वामी जी ने इस ग्रंथ का अवष्यक्ता स्वयं कह हैं:

गुरुपाद कृतौष्यस्ति संग्रहे ह्रदयंगमः ।
प्रस्थानभेदप्रोक्तार्थ संग्रहेऽथाष्यं मम ।।

"गुरुपाद (श्री विजयींद्र तीर्थ) के ह्रदयंगम सूत्रार्थसंग्रह के बावजूद , विविध ग्रंथों में व्यक्त अर्थों के संग्रह के लिए यह मेरा कृति है। "

इस विचार के अनूरूप, भ्रह्म सूत्रों का अर्थ—विवरण करते हुऐ श्री स्वामी जी ने सन्याय रत्नावळी , नयचंद्रिका , तत्व प्रदीप , तत्व प्रकाशिका , न्याय सुधा , तात्पर्य चंद्रिका , खंडनत्रय टीका इत्यदि ग्रंथों का उल्लेखन कर , सूत्रार्थों का संग्रह करके निरूपित् किया है।

तंत्र दीपिका ग्रंथ के विषय मे “गुरुगुणस्तवन” रचाने वाले श्री वादींद्र तीर्थ के अनुसार:

भिन्नैरथैरनेकप्रकरणभणीतैरद्य मध्वागमाचौधा
मत्या भूयो विचिंत्य श्रृतिपरिणतया शस्तया संग्रहीतैः ।
सूत्रे श्वेकैकशोपि व्रतिवर भवता योजितेषु प्रवाचां
मादो यादैज् न ताद्रक तव पुनरितरै राघवेंद्र प्रभंधैः ।।

“पूज्य यति श्रेष्ठ श्री राघवेंद्र! मध्व शास्त्र नामक समुद्र मे भिन्न प्रकरणो मे अनेक ग्रंथ-कर्थाऔं के सूत्रार्थ का संग्रह कर श्रुति-विमर्श मे परिणत आपके प्रशस्त बुद्धि से और विचार-उपरयांत सूत्रों मे हर ऐक का अलग से “योजित” करने से प्राचीनोंको जितना आनंद मिला , उतना आनंद आपके ग्रंथों से नही मिला“

इसका यह मतलब नही है कि श्री राघवेंद्र स्वामी जी के दूसरे ग्रंथों का स्तर नीचा है। प्राचीनो द्वारा दिये गये सारे अर्थो को समझकर, उनमे गलतियॉं या विरोध जब मिलिं तो उनका परिहर करके सारे प्राचीनोंके विचारों का जिस तरह से समर्थन इस ग्रंथ मे किया है उस तरह का समर्थन आपके दूसरे ग्रंथों मे नही है - यही है इसका अर्थ। क्यों के दूसरे ग्रंथों कि विषय भी अलग था और उनका उद्धेश्य भी अलग था।

श्री राघवेंद्र विजय रचने वाले श्री नारायणार्य का इस ग्रंथ के बारे मे यह केह्ना है:

सूत्रपात्ररुचिरं कलितर्धि न्यायपूर्वक सुधाज्यभरेण ।
तंत्र दीप मनुभोधयदर्थ भाष्यवार्तिकमयं तनुतेस्म ।।

“भ्रह्म सूत्र नामक बरतन मे, न्याय सुधा नामक घी भरके भ्रह्मसूतभाश्य नामक भक्ति को रखके जलाने वाले आपका तंत्र दीपिका ग्रंथ सबको प्रज्चलित करती है”

इस तरह से निरूपण करके यह कहा गय है कि भ्रह्म सूत्र के मज़बूत नीव् पर आधारित् यह ग्रंथ न्याय सुधा ऐवं सूत्र भाष्य नामक ग्रंथों का अच्छा अवलंभन करके रचा गया है। सूत्रों का अर्थ विवरण करने मे “अनुवृत्ति” , “आवृत्ति” , “आकरशण” , “अध्याहार” , “शेष” , “मंडोकप्लुति” जैसे अनेक शाब्दिक प्रकृियाऔं का उपयोग किया है। और , पाणिनि के सूत्रों का व्याख्यान करते वक्त पतंजली जैसे भष्यकारों से इनका उपयोग यह सिद्ध करता है के इस तरह के प्रकृियाऔं का उपयोग का संप्रदाय सूत्र अर्थ विवरण मे पह्ले से था। और यह भी सूचित किया है कि इस प्रकार का व्याख्यान करन उनका कल्पित नही है। कई बार सूत्रों के प्रस्थान के अनुसार विविध विवरण भी दिए गए है। कुच जगहों पर व्याख्यानकारों के नामों का उल्लेख पाया गया है। और कुछ जगहों पर अर्थो के साथ केवल “अन्येतु”का उल्लेख पाया जाता है।

श्री स्वामी जी के इस ग्रंथ कि शैली और उनके समर्थन की कुशलता का नमूना जिज्ञासा सूत्र मे देखा जा सक्ता है।

ब्रह्म सूत्रों के पहले दो अध्यायों मे ब्रह्म स्वरूप का , तीसरे मे साधन स्वरूप का , चौथे मे फलस्वरूप का विचार किया गया है। आध्य सूत्र मे ब्रह्म विचार को सूचित करने वाला शब्द 'ब्रह्म जिज्ञासा'। साधन को सूचित करने वाला शब्द 'अथ'। फल को सूचित करने वाला शब्द 'अतः'। इस कारण से , ब्रह्म सूत्रों निरूपण करने के अनुसार क्या 'ब्रह्म जिज्ञासाऽथातः' का सूत्रविन्यास हुआ होगा ? इस प्रष्ण को लेकर , 'अथ' और 'अतः' शब्दों के शब्दस्वरूप और अर्थ के दृश्टिकोण से महत्वपूर्ण होने के कारण इनका प्रयोग कर 'अथातो ब्रह्म जिज्ञासा' का सूत्र रचन किया गया है।

शास्त्रयोनित्वाधिकरण मे यूँ विचार किया गया है – जो जगजन्मादि कारण स्वरूप लक्षण मे वेद ही प्रमाण होने के कारण , इस सूत्र को 'वेदयोनित्वात' होना चाहिए था। फिर भी 'ऋग्यजुः सामाधर्वाष्च मूल रामायणं तथा। भारतं पंचरात्रं च शास्त्रमित्यभिधीयते' के प्रमाण मे लिखित स्मृतियों का संग्रह करने के लिए 'शास्त्रयोनित्वात' कहा गया है। सूत्र मे शास्त्र पद के ग्रहण करने से अनुमान का निराकरण हुअ। वैसे ही पाषुपतागम् के विषय मे "नैव शास्त्रं कुवर्त्मकत" प्रमाण के होने के कारण वह शास्त्र ही नही कहलासकता था। इस लिए पाषुपतागम का भी "निरास ..."। "शास्त्रमानत्वात" के जगह "शास्त्रयोनित्वात" का प्रयोग "प्रामाण्यवन्नु" का समर्थन करने के लिए किया गया है।

Shaastra padadindale ... untu!

किया हुआ ज्ञान के यथार्थ होने के लिए शास्त्रों को "प्रामाण्यता" का सिद्धि होता है।

जिस पद के न मिलाने से सूत्रार्थ या वाक्यार्थ का "अनुपपन्नवागुतदेयो" होता है वैसे पद का मिलाना "अध्याहर" कहलाता है। जिज्ञासा सूत्र ऐसि अध्याहर का अच्छा उधाहरण है। अथातोब्रह्म जिज्ञासा नामक सूत्र अथ = अधिकार संपत्ति के बाद अथः = मोश्ररूपी महा फल कि होने कि कारम से यह ब्रह्म विचार है – यही इसका अर्थ है। यह अपूर्ण है – इसके कारण ब्रह्म विचार के अर्थ पर प्रष्ण चिन्ह लगता है। इस प्रष्ण के परिहार के लिए 'कर्तव्या' करने का पद का अध्याहर करना चाहिए। ऐसा न करने से अर्थ शब्द से अधिकार अथः शब्द से फल का कहन "अनुपपन्नवागुतदे"। सूत्रार्थ को परिपूर्ण करने के लिए पद का जोड़ना "शेष" कहलाता है। अध्याहर मे "अनुपपतिय"का परिहार भी एक उद्धेष्य है। लेकिन यहाँ वाक्य कि निराकांक्षता ही उद्धेष्य है। 'अस्मिन्नस्य च तदयोगं शास्ति' (1.1.1?) मे 'शृतिः मुक्तापि' के तीन पदों को शेष के रूप मे जोड़ना चाहिए। तब 'अस्मिन्नस्य च तदयोगं शृतिः मुक्तापि शास्ति' सूत्र का योजना होता है। इस प्रकरण मे अस्मिन् का अर्थ अस्य = इस जीव को तदयोगं = उस आनंदमय ब्रह्म के साथ संबंध को शृतिः 'सोष्नुते सरवन कामान सह ब्रह्मणा' का शृति मुक्तापि = मोक्ष मे भी "वक्ती" = यह सूत्र का संपूर्ण अर्थ है। मोक्ष मे भी शृति मे जैसे कहा गया है ...

जीव का संबंध भ्रह्म से ही होनि कि वजह से ऐक्य दिया नहि जाता – इस से सिद्ध होता है के आनंदमयादि जीव नही है।

ऐक वाक्य मे कह्त गया शब्द को दूसरि बार का अनुसंधान आवृत्ति कह्लाता है। 'छंदोभीधानान्नेति चेन्न ...'**(1•1•25)** सूत्र मे 'छंदः' शब्द का प्रयोग है।इसको आवृत्ति का रूप देना चाह्ए। अर्थात दोबारा अनुसंधान करके अर्थ विवरण करना चाह्ए।तब सूत्र का योजना 'छंदः छंदोभीधानान्नेति चेन्न ...' होता है। 'गायत्री वा इदं सर्वं' के शृति मे जैसे कह्त गया है गायत्री छंदः 'छंदस' ही होता है।क्योंकि छंदोभिधानात् गायत्री शब्द से 'छंदस' ही कह्त जाता है। इस सूत्र के पूर्वपक्ष भाग का यही योजन है।

पिचले सूत्र मे कह्त गया पद का प्रयोग जब आगे के सूत्र मे किया जाता है, उसे अनुवृत्ति कह्त जाता है।'गतिसामान्यात्'(1.1.10) का सूत्र है।इसके अर्थ विवरण करने के लिए 'शास्त्रयोनित्वात्' (1.1.3) के सूत्र से 'शास्त्रयोनि' पद को, और 'तत्तु समन्वयात्' (1.1.4) के सूत्र से 'तत्तु' पद को लेकर गतिसामान्य सूत्र से जोड़ना चाह्ए। इस से सूत्र का पूर्ण योजन 'गतिसामान्यात् तत् तु शास्त्रयोनि' बनता है।गतेः का अर्थ 'सर्व शास्त्रों से मिलने वाला ज्ञान सामान्यात् ऐकरूपि होने के कारण तत् तु विष्णु नामक परभ्रह्म ही जगतकारण शास्त्रप्रतिपाद्य होते है'।सूत्रार्थ यह बनता है के कोई और (भ्रह्मादि) नहि हो सक्ता।

वैसे ही 'नेतरोऽनुपपत्तेः' का सुत्र है (1.1.??)।यहॅ, पिचले सूत्र(1.1.12) से 'आनंदमयादिः' पद लेना चाह्ए। ऐसे अनुवृत्ति करने के उपरांत, इस सूत्र का योजन 'आनंदमयादिः नेतरं अनुपपत्तेः' बनता है। 'आनंदमयादिः' आनंदमयादि, नेतरः श्री विष्ण के अलावा बाकि के भ्रह्मदि चैतनिक् नहि हो सक्ते – क्योंके उन्हे शृति मे आनंदमयादियों को दिया हुवा मोक्षजनक ज्ञान विषयत्व दिया नहि जाता – यहि इसका अर्थ है।

यह ग्रंथ ऐसे आरंभ से अंत तक् प्रस्थान करता है।श्री स्वामि जी द्वारा इसका मंगळाचरण –

प्रणम्य गुणसंपूर्ण दोशातीतं रमापतिं ।
पूर्णभोधान् गुरूनन्यान कुर्मः सूत्रार्थसंग्रह्म् ।।

यह श्री स्वामि जी का अत्यंत सरळ शैलि का नमूना है। उनके सारे ग्रंथों का मंगळाचरण सबके समझ कि सीमा के भीतर होता है।

ग्रंथ के अन्त मे आनेवाला मंगळश्लोक भी ऐसा ही है:

कल्याणगुणपूर्णय दोशदूराय विष्णवे ।
नमः श्री प्राणनाथाय भक्ताभीष्टप्रदायिने ।।

श्री स्वामि जी के सारे ग्रंथों के अंत मे ऐसा ही श्लोक पाये जाते है। इसके उपरांत

सुधींद्रगुरुपादानां शिष्येण श्री शतुष्टये ।
राघवेंद्रेण यतिना कृतेयं तंत्रदीपिका ।।

से ग्रंथ का समापन किय है। अपने गुरु जी का नाम लेकर उन्हे गुरुपाद ही कहके अपने आपको ऐकवचन मे **राघवेंद्रेण यतिना** कहकर अपने सविनयता का उदाहरण प्रस्तुत् किया है।

मंगळाचरणश्लोकों कि इतनि सरळ होने के बावजूद, ग्रंथ के अंदर बहुत अर्थगर्भित पदों कि प्रयोग है। इस कारण ग्रंथ काफि पतला होते हुए गेहराई मे अगाध है। ईनका पूर्ण अर्थ सिर्फ ज्ञानियों को ही लभ्य है। जैसे जैसे वाक्य छोटे होते जातिं है वैसे हि उनका अर्थ और कठिण होता जाता है। बुजुर्गों के बातों मे यहि लक्षण नज़र आयेंगी। इस ग्रंथ को सामान्य किताब या ग्रंथ कि तरह पड़के समझन नामुंकिन है। सिर्फ वही इसे पड़के समझसक्ते है जिन्हे श्री स्वामि जी का पूर्णानुग्रह प्राप्त है। प्रातः स्मरणीय श्री विद्यामान्य तीर्थ को श्री स्वामि जी का ऐसा पूर्णानुग्रह प्राप्त था। जिन वाक्यों का अर्थ दूसरे कह्यिों के समझ के बाहर होता उन्हे यह आसानि से उ नका विवरण देते थे।

ह्में भी श्री स्वामि जी के अनुग्रह को प्राप्त कर उनके ग्रंथों का अथ्ययन करना चाहिए।